शिवाजी के पूर्वज उसी सीसोदिया वंश के थे, जिसकी वीरता से मेवाड़ के इतिहास के पन्ने रँगे पड़े हैं। जब वे दक्षिण में जा बसे, तब भोंसला कहलाने लगे।

शिवाजी के पिता शाहजी का विवाह जीजाबाई के साथ ज़बर्दस्ती किया गया था। शाहजी के पिता अर्थात् मालोजी निज़ामशाह के यहाँ एक साधारण शिलेदार के पद पर नौकरी करते हुए उन्नति कर रहे थे। उस समय लखूजी जादवराय से उनकी मित्रता थी। लखूजी जादवराय मनसब के पद पर थे। दरबार में उनका पद बहुत बड़ा था। इसके सिवा वे धन सम्पत्ति में भी बहुत बढ़े-चढ़े थे। एक बार होली के त्योहार में, रङ्गपंचमी के दिन मालोजी अपने पुत्र शाहजी को साथ लेकर लखूजी जादवराय के यहाँ उनसे मिलने को गये हुए थे। बालक शाहजी अपने पिता की गोद में बैठे हुए थे। देखने में वे बड़े सुन्दर मालूम होते थे। लखूजी जादवराय बालक शाहजी को देखकर बड़े खुश हुए। उसी समय उनकी लड़की जीजाबाई भी खेलती हुई उधर आ पहुँची। अपने पिता को पास ही बैठा हुआ देखकर वह उनकी गोद में जा बैठी। दोनों बालक-बालिका एक दूसरे को देखकर बड़े प्रसन्न हुए। बात की बात में दोनों में मित्रता होगई। दोनों वहीं खेलने लगे।

लखूजी जादवराय स्वभाव के बड़े हँसोड़ थे। शाहजी के साथ खेलते देखकर जीजाबाई से वे कहने लगे—देख जीजी, यह दुलहा (शाहजी) तुझे पसन्द आता है न? कैसा अच्छा है! फिर मालोजी की ओर देखकर बोले—कैसी अच्छी जुगल जोड़ी है!

इधर मालोजी बड़े चतुर थे। मौक़े से लाभ उठाना वे ख़ूब जानते थे। त्यौहार होने के कारण लखूजी जादव-राय के पास और भी बहुत से पुरुष बैठे हुए थे। उसी भरी सभा में मालोजी उठकर कहने लगे—श्रीमान् लखूजी जादवराय ने अभी जो कुछ कहा है, वह आप सब लोगों ने सुना ही है। उनके कहने के अनुसार आज से जीजाबाई मेरी बहू और लखूजी मेरे समधी हुए। बड़े आदमी पश्च जो बात कह देते हैं, वह फिर कभी टल नहीं सकती। इसलिये जो निश्चय आज उन्होंने कर दिया है, वह अब कभी बदला न जा सकेगा। मालोजी के साथ आज उनके भाई बिठोजी भी थे। उन्होंने भी अपने भाई का साथ दिया। इस तरह यह बात और भी पक्की हो गई।

लखूजी जादवराय अपने हँसोड़ स्वभाव के कारण मालोजी की ऊपर लिखी बात को, दिल्लगी समझ, हँसकर चले गये। पर जब यह बात लखूजी की स्त्री ने सुनी, तो उसको बहुत बुरा मालूम हुआ। उसने लखूजी

को समझा-बुझाकर उन्हें यह मानने पर विवश किया कि इस तरह हमारे वंश का अपमान हुआ है। और लोगों ने भी इस मामले में लखूजी की स्त्री की बातों का साथ दिया। तब लखूजी ने मालोजी के पास सँदेसा भेजकर कहला दिया कि वे सब बातें दिल्लगी में कही गई हैं। असल में उनमें कोई सार नहीं है। मैं उनको मानने के लिए लाचार नहीं हूँ।

पर मालोजी ने इस पर कहला भेजा कि जो बात इतने आदमियों में हो चुकी, वह अब टल नहीं सकती। आपको जीजाबाई का विवाह मेरे पुत्र के साथ करना पड़ेगा। अन्त में इसी कारण लखूजी जादवराय तथा मालोजी में अनबन हो गई। यह अनबन यहाँ तक बढ़ी कि मालोजी तथा उनके भाई बिठोजी को अपनी नौकरी छोड़ देनी पड़ी। लखूजी जादवराय ने उनको अलग कर दिया। इस तरह मालोजी तथा बिठोजी की नौकरी ही नहीं छूट गयी, बल्कि उनको उनकी जागीर भी छोड़ देनी पड़ी। तब वे अपने गाँव वेरूल में आकर खेती करने लगे।

मालोजी तथा बिठोजी समझ गये कि एक मामूली शिलेदार के पद पर होने के कारण लखूजी जादवराय ने हमारा निरादर किया है। अब वे अपने इस अपमान का बदला लेने पर तुल गये। रात-दिन वे इसी चिन्ता में

रहने लगे कि किस प्रकार लखूजी जादवराय से अपने अपमान का बदला लिया जाय। उन्होंने सोचा—बिना धन इकट्ठा किये कोई काम नहीं हो सकता। पर यदि हमारे पास धन ही होता, तो हमारा इतना अपमान ही क्यों किया जाता। दोनों भाई भवानी के बड़े भक्त थे।

एक दिन भवानी ने मालोजी को स्वप्न में एक छिपे हुए धन का पता बता दिया। तब वे भवानी के बताये हुए स्थान से वह धन खोद लाये। उस धन को पा जाने से उनकी ताक़त बढ़ गई। उन्होंने एक हजार घोड़े ख़रीद कर बहुत से शिलेदार तथा सिपाही भरती कर लिये। इस तरह अब वे लखूजी जादवराय के समान धनी-मानी समझे जाने लगे।

मालोजी तथा बिठोजी ने अब फिर लखूजी जादवराय के पास उनकी लड़की को अपने पुत्र से ब्याह देने का संदेसा भेजा। अगर लखूजी जादवराय चाहते, तो अब वे अपनी लड़की को शाहजी के साथ ब्याह दे सकते थे। पर घमंड में आकर उन्होंने फिर इनकार कर दिया। लखूजी जादवराय का इस बार का व्यवहार मालोजी को और भी खल गया। उन्होंने निम्बालकर से मिलकर उनकी सहायता से लखूजी जादवराय की जागीर में लूटमार शुरू कर दी। इसके सिवा उन्होंने निज़ाम के

शाह से भी लखूजी जादवराय की शिकायत की। उन्होंने उन्हें बतलाया कि भरी सभा में लखूजी जादवराय जो वादा कर चुके हैं, वे उसको पूरा नहीं करते। उन्हें अपनी मनसबदारी का इतना घमंड है कि उचित-अनुचित का भी उन्हें कुछ ख्याल नहीं है। मालोजी ने यह शिकायत निज़ामशाह के पास ऐसे ढंग से भेजी कि उनका ध्यान उनकी बातों की ओर तुरन्त खिंच गया। उन्होंने दौलताबाद की एक मसजिद में सुअर के दो बच्चे मारकर उन्हीं के गले में एक चिट्ठी में यह सब हाल लिख दिया। अन्त में उन्हें इस बात की भी सूचना दे दी कि अगर आप हमारी इस बात पर ध्यान न देंगे तो लाचार होकर हमको आपकी जागीर की सभी मसजिदों में ऐसे उत्पात करने के लिए मजबूर होना पड़ेगा।

मालोजी का यह उपाय काम कर गया। निज़ामशाह ने लखूजी जादवराय से कहा कि वह मालोजी के लड़के शाहजी से अपनी लड़की का ब्याह कर दें। लखूजी जादवराय ने जवाब दिया कि मैं ऐसे साधारण शिलेदार के लड़के के साथ अपनी लड़की का ब्याह नहीं कर सकता। निज़ामशाह को लखूजी जादवराय का यह उत्तर अच्छा नहीं लगा। उन्होंने उनका घमंड चूर करने के लिए मालोजी तथा उनके भाई बिठोजी को बारह-बारह

हज़ार घुड़सवारों के मनसब का पद देकर अपने यहाँ रख लिया। इसके सिवा उन्होंने मालोजी को राजा का खिताब भी दिया।

अब मालोजी का मान-पान लखूजी जादवराय से भी बढ़ गया। अपनी योग्यता और दिलेरी से मालोजी ने निज़ामशाह को अपनी ओर कर लिया। निज़ामशाह उनसे बड़े प्रसन्न रहने लगे। थोड़े दिनों बाद निजामशाह के फिर कहने पर लखूजी जादवराय ने अपनी लड़की जीजाबाई का विवाह मालोजी के पुत्र शाहजी से कर दिया। इस विवाह में राज्य के सभी बड़े आदमी शामिल हुए थे। यह विवाह सन् १६०४ के अप्रैल महीने में हुआ था।

माता-पिता

मालोजी की मृत्यु के बाद, उनकी जगह शाहजी को मिली। शाहजी अपने पिता के समान ही वीर और बुद्धिमान् थे। अनेक अवसरों पर उन्होंने अपनी योग्यता का अच्छा परिचय दिया था। जिस समय शिवाजी का जन्म हुआ था, उस समय वे बीजापुर में थे।

शाहजी के ब्याह के बाद भी उनके वंश के साथ लखूजी जादवराय के वंश के लोगों का वैर-भाव ज्यों का त्यों बना हुआ था। यहाँ तक कि अपने दामाद शाहजी से भी लखूजी जादवराय बराबर दुश्मनी ही मानते थे।

वे निज़ामशाह को छोड़कर मुग़लों से जा मिले थे। उधर शाहजी को मुग़लों के बादशाह से लड़ना पड़ रहा था। ऐसे अवसर पर लखूजी जादवराय बराबर इस घात में रहते थे कि शाहजी को किसी तरह पकड़कर क़ैद कर लें। पर शाहजी बराबर उनसे बचते आ रहे थे। एकबार लखूजी जादवराय को शाहजी को पा जाने में थोड़ी ही सी कसर रह गई थी। शाहजी माहुली क़िले से भाग रहे थे, उधर लखूजी भी उनका पीछा करते हुए उधर ही आ रहे थे। माहुली क़िले से भागते समय उनके साथ उनकी स्त्री जीजाबाई तथा पहला लड़का शम्भाजी भी साथ था। जीजाबाई घोड़े पर सवार थीं। पर गर्भवती होने के कारण वे थोड़ी दूर तक चल सकीं। ज़रा सोचो तो सही, शाहजी उस समय कैसी मुसीबत में थे। युद्ध के दिन हैं, दुश्मन पीछे है, साथ में स्त्री तथा बच्चा है। स्त्री गर्भवती है। वह घोड़े पर चढ़कर चल नहीं सकती! पर ऐसी आफ़त के समय भी शाहजी ने समझदारी से काम लिया। आगे उन्हें जुन्नार का क़िला मिल गया। इस क़िले के स्वामी उनके मित्र श्रीनिवासराव एक जागीरदार थे। शाहजी ने अपनी स्त्री तथा बच्चे को अपने इन्हीं मित्र को सौंप दिया। उन्होंने जीजाबाई को शिवनेरी के क़िले में रख दिया। शाहजी आगे बढ़ गये।

शिवनेरी के क़िले से अभी शाहजी विदा हुए ही थे कि लखूजी जादवराय वहाँ आ पहुँचे। लखूजी के साथ के लोगों ने उन्हें समझाते हुए कहा कि आपका बैर तो शाहजी से है। बेचारी जीजाबाई का उसमें कोई दोष नहीं है। आख़िर लड़की वह आप ही की है। अगर आपने उसे मुग़लों के हाथ में दे दिया तो सोच देखिये, उसकी क्या दशा होगी? इस समय तो आपको जीजाबाई की रक्षा ही करनी चाहिए। लोगों की यह सलाह लखूजी की समझ में आगई। इसलिए वे जीजाबाई से मिलने के लिए उसके पास गये।

जीजाबाई भी कम स्वाभिमानिनी न थीं। वे अपने पति शाहजी पर बड़ी भक्ति रखती थीं। वे बोलीं—अब पति के बदले मैं आपके हाथ में आ पड़ी हूँ। यदि आप मुझसे उनका बदला चुकाना चाहें, तो मैं खुशी से तैयार हूँ।

लखूजी जादवराय अपनी पुत्री की इस बात को सुनकर बहुत दुखी हुए। जीजाबाई के सिर पर हाथ फेरते हुए वे बोले—जो कुछ होना था, सो तो हो गया। अब उसके लिए क्या किया जाय। पर अब यह तो बतलाओ कि तुम चाहती क्या हो? कहाँ जाओगी, कैसे रहोगी? अच्छा तो यह होगा कि तुम मेरी जागीर

सिन्धखेड़ा चली चलो। वहाँ तुमको किसी तरह की तक़लीफ़ नहीं होने पायेगी।

कोई और स्त्री होती, तो ऐसे संकट के समय में ज़रूर पिता के घर चली जाती। पर जीजाबाई ने सोचा—जो पति मेरे लिए परमेश्वर है, जब ये (पिता) उसी के विरुद्ध हैं, तो इनके साथ चले जाने में मेरे पति का अपमान होगा। इसलिए उन्होंने कहा—मैं तो अब यहीं रहूँगी। यहीं रहने की मेरी इच्छा है। मुझको अब यहीं रहने दो।

लखूजी ने जीजाबाई को बहुत कुछ समझाया, पर किसी तरह वे उनके साथ जाने को राज़ी नहीं हुईं। लखूजी जादवराय अन्त में लौट गये। इस क़िले की रक्षा के लिए चलते समय अपने कुछ सिपाही भी वे वहीं तैनात कर गये।

जन्म और शिक्षा

इस घटना के दो महीने बाद ही उस क़िले में शिवाजी जी का जन्म हुआ। किले की देवी का नाम शिवाई था। इसलिए उसमें पैदा हुए बच्चे का नाम देवी के नाम से शिवाजी रक्खा गया। कौन जानता था कि एक दिन यही बच्चा इतना बड़ा आदमी होगा कि उसका जन्म-दिन हिन्दू जाति के लिये बड़े ही आनन्द और

उत्साह का दिन माना जायगा ! कौन कह सकता था कि वही बच्चा एक दिन इतना प्रतापी, वीर, साहसी और तेजस्वी निकलेगा कि मुसलमान उसका नाम सुनकर काँप उठेंगे ! मुगल-सम्राट् औरंगजेब तक उसकी याद करके सोते हुए चौंक पड़ेंगे ? और फिर उनकी सुख की नींद ग़ायब हो जायगी !

शिवनेरी के क़िले में जीजाबाई तीन वर्ष तक रही थीं। हालाँकि वह क़िला उनके मित्र के अधिकार में था; लेकिन फिर भी मुग़लों की नज़र उस पर बनी ही रहती थी। वे सदा इस अवसर की ताक में रहते थे कि ज्योंही शाहजी अपने पुत्र को देखने के लिये आवें, त्योंही उन्हें क़ैद कर लिया जाय। पर जीजाबाई बालक शिवाजी को इस तरह छिपाये रहीं कि मुग़लों को उसका कुछ पता न चल सका। इस प्रकार तीन वर्ष जीजाबाई को उस क़िले के अन्दर नज़रबन्द रहना पड़ा। अन्त में शाहजी ने मुग़लों से सुलह कर ली। तब जीजाबाई को लेकर पूना चले आये।

जीजाबाई एक बड़े घराने की लड़की थीं। पति में भक्ति, भगवान् में विश्वास, गौ और ब्राह्मणों की रक्षा और दुष्टों को दण्ड देने के भाव उनमें कूट-कूटकर भरे हुए थे। जीजाबाई के मन के भावों और उनके विचारों का

असर बालक शिवाजी पर पड़ा। जीजाबाई उन्हें रामायण और महाभारत की कहानियाँ सुनाया करती थीं। राजनीति और धर्मपालन की बातें वे ऐसी सरल भाषा में उन्हें सुनाती थीं कि बालक शिवाजी के मन पर वे पत्थर की लकीर की भाँति अमिट रूप से जम जाती थीं। बालक शिवाजी जब अपनी तोतली भाषा में कहते—अम्मा, अम घोले पल तलेंगे—अम लाजा होंगे। तो ख़ुशी के मारे जीजाबाई का रोवाँ-रोवाँ खिल उठता था! वे तुरन्त उसे उठाकर गोद में ले लेतीं और उनका मुँह चूमकर कहतीं—मेरा शिवा ज़रूर राजा होगा। जीजाबाई की यह आशा अन्त में पूरी तरह सफल हुई। शिवाजी राजा ही नहीं महाराज कहलाये।

मुग़लों से सुलह कर लेने के बाद शाहजी फिर बीजापुर-दरबार में आगये। यहाँ उनको पूना और सूपा की पुरानी जागीरें फिर मिल गईं। उधर अहमदनगर की निज़ामशाही भी नष्ट हो गई थी। शिवाजी के जन्म के समय शाहजी ने एक दूसरा ब्याह कर लिया था और वे बीजापुर में ही रहने लगे थे। उनके पूना इलाके का प्रबन्ध दादाजी कोणदेव नामक एक ब्राह्मण पंडित के हाथ में था। वे राजनीति के बड़े विद्वान थे। उनके सुप्रबन्ध का सिक्का जागीर भर में जमा हुआ था। जीजाबाई और

शिवाजी इन्हीं की देख-रेख में रहते थे। इसलिए दादाजी कोणदेव के जीवन और उनके उपदेशों का शिवाजी पर बहुत प्रभाव पड़ा।

दादाजी कोणदेव ने बचपन से शिवाजी को क्षात्र-धर्म की शिक्षा देना शुरू कर दिया था। दादाजी पुस्तकी विद्या से बहुत घबड़ाते थे। उनका मत था कि जो शिक्षाएं बालक के मन पर जम जाती हैं, वे सदा के लिए अमिट हो जाती हैं। पहले तो उन्होंने शिवाजी को घोड़े पर सवारी करने, तीर मारने, तलवार चलाने, कुश्ती लड़ने और पटेबाजी से शत्रु पर वार करके अपना बचाव करने की शिक्षा दी। फिर उनको राज्य के प्रबन्ध का काम सिखलाया। दरबार करते समय वे शिवाजी को अपने साथ रखते, उसके सामने झगड़ों का फ़ैसला करते और बीच-बीच में, कभी-कभी शिवाजी की राय भी लेते जाते थे। वे उन्हें जटिल मामलों का भेद समझाते और उनकी असलियत मालूम करने की रीति बतलाते थे। प्रजा की असली दशा जानने के लिए वे जब गाँवों में दौरा करने जाते तो अपने साथ में शिवाजी को ले जाते थे। इस प्रकार चौदह वर्ष की अवस्था में ही कुमार शिवाजी को दादाजी कोणदेव ने युद्ध-विद्या, राज-नीति और राज्य के काम में पूरी तरह योग्य बना दिया।

कुमार शिवाजी शरीर से बड़े हृष्ट-पुष्ट और तगड़े थे। देखने में भी वे कम सुन्दर नहीं मालूम होते थे। मनुष्य के चेहरे देखकर वे उसके मन का भाव ताड़ जाते थे। वे प्रत्येक काम सोच समझकर करते थे। विचारने की शक्ति उनमें अनोखी थी। अपने इन गुणों के कारण वे अपने साथियों को अपने सेवक के समान आज्ञाकारी बना लेते थे। हिन्दू-धर्म से उनका इतना प्रेम था कि उस पर प्राण तक न्यौछावर कर देने को सदा तैयार रहते थे। अपने कर्तव्य के पालन में वे सदा तत्पर रहते थे। सुस्ती और आलस्य को वे मनुष्य जीवन के लिए बहुत ही घातक मानते थे। उनके इन सब गुणों को देखकर लोग उनसे इतने ख़ुश रहते थे, उनका इतना आदर करते थे कि कुमार शिवाजी की साधारण से साधारण बातों का भी सदा ध्यान रखते थे। कुमार शिवाजी को देखकर अक-सर लोग कह उठते थे कि एक दिन यह महापुरुष होगा। आगे तुम देखोगे कि प्रजा की यह आशा अन्त में पूरी हुई।

तेरह वर्ष की अवस्था में शिवाजी का ब्याह निम्बाल-कर वंश की कन्या सईबाई के साथ हुआ था। शाहजी चाहते थे कि उनका यह विवाह बीजापुर से किया जाय। पर शिवाजी ने कहा कि बीजापुर से विवाह होने से उसमें विधर्मी मुसलमान भी शामिल होंगे। इस तरह इस शुभ

कार्य्य की पवित्रता नष्ट हो जायगी । इसलिए उन्होंने पूना में अपना ब्याह किया जाना स्वीकार किया । तब शिवाजी का ब्याह पूना में ही धूमधाम के साथ किया गया ।

धर्म-रक्षा के भाव

कुछ दिनों बाद शाहजी ने शिवाजी को बीजापुर में बुला लिया । यहाँ अपनी माता के पास वे दो-तीन वर्ष रहे । उनकी चालढाल इतनी अच्छी थी कि थोड़े ही दिनों में बीजापुर के अमीर-उमरा लोगों का ध्यान उनकी ओर खिंच गया । उन्होंने बीजापुर के सुलतान से शिवाजी की बड़ी प्रशंसा की । दरबार के मुसाहबों से शिवाजी की प्रशंसा सुनकर सुलतान को शिवाजी के देखने की इच्छा हुई । दरबार में मुरार पन्त नाम के एक सज्जन शाहजी के मित्र थे । दोनों ने सलाह करके शिवाजी को दरबार में अपने साथ ले जाने का निश्चय किया । मुरार पन्त ने शिवाजी से कहा कि आज तुम भी हमारे साथ दरबार में चलना । वहाँ पहुँचने पर बादशाह को झुककर सलाम करना । इसके उत्तर में शिवाजी ने कहा--बादशाह विधर्म्मी होने के कारण गौ और ब्राह्मणों का शत्रु है, पर मैं उसका सेवक हूँ । वह यवन है, उसको छूने से मुझे कपड़े बदलने होंगे—स्नान करना होगा । इसलिए मैं उससे मिलने को नहीं जा सकता । रास्ते में कसाइयों की

दूकानें पड़ती हैं। जब वे लोग गौ को मारते हैं तो मेरा ख़ून खौल उठता है। मैं गो-वध को देख नहीं सकता। आप सब गुरुजनों का ख्याल करके मैं जी मसोसकर चुप रहता हूँ। सुलतान को सलाम करना दूर रहा, मैं तो चाहता हूँ, उसका सिर धड़ से उतार लूँ!

शिवाजी का यह उत्तर सुनकर शाहजी तथा मुरार पन्त बहुत दुखी हुए। अपने मित्रों के द्वारा उन्होंने शिवाजी को समझाने की बहुत कोशिश की। उन्होंने कहलवाया कि इस समय कुछ यहाँ ही नहीं, सारे भारत-वर्ष में विधर्मी राज्य करते हैं। विधर्मियों से द्वेष रखकर हम कैसे रह सकते हैं। विधर्मी राज्य की सेवा करके ही हमने उन्नति की है। तुम इतने बुद्धिमान होकर ये कैसी नासमझी की बातें करते हो! पर शिवाजी ने यही उत्तर दिया--यवन बादशाह के आगे ज़मीन तक झुककर सलाम करने को तो मैं तैयार नहीं हो सकता। शिवाजी की माता जीजाबाई ने भी उन्हें बहुत कुछ समझाया; पर उन्होंने अपना हठ नहीं छोड़ा। अन्त में शाहजी ने अपने पास बुलाकर खुद ही उन्हें समझाते हुए कहा--मैं तो तुमसे बहुत कुछ आशा करता हूँ, पर तुम्हारी यह टेक देखकर मुझे बड़ी निराशा होती है। ज़रा सोच देखो कि जब इस देशभर में जिधर देखो उधर यवनों का ही राज्य

है, तब हम कर ही क्या सकते हैं ? फिर अपना धर्म-पालन करते हुए, मुसलमानी राज्य की सेवा करके अगर हम अपना जीवन-निर्वाह करते हैं, तो इसमें कौन सी अनुचित बात है ? जब ईश्वर की यही इच्छा है कि हम विधर्मी राज्य की सेवा करके ही अपना निर्वाह करें तो हम और कर ही क्या सकते हैं ? अभी तुम लड़के हो, तुमको अभी हित-अनहित का ज्ञान नहीं है। इसलिए तुमको हमारी आज्ञा का पालन करना चाहिए।

शिवाजी ने उत्तर दिया कि मैं आपकी आज्ञा का पालन करने के लिये तैयार हूँ; पर यवन गो-वध करते हैं और देवता-स्वरूप ब्राह्मणों को सताते हैं, मैं उनके इस अत्याचार को तो किसी तरह भी सहन नहीं कर सकता।

निश्चय की दृढ़ता

शाहजी यद्यपि बीजापुर के सुलतान की सेवा में रहते थे; पर स्वभाव के कुछ कमज़ोर न थे। समय देखकर उसके अनुसार चलना ही उनकी नीति थी। शिवाजी के रुख को देखकर वे यद्यपि दुखी हुए; परन्तु भीतर से शिवाजी की धर्म-निष्ठा देखकर वे उन पर ख़ुश भी कम न थे। वे चाहते तो असल में यह थे कि सुलतान की

इच्छा के इस मौक़े से लाभ उठाया जाय। इसलिए उन्होंने शिवाजी को दरबार में चलने के लिए राज़ी कर लिया। दरबार में चलकर सुलतान के सामने ज़मीन छूकर मुजरा करने और फिर इशारा पाकर बताये हुए स्थान पर बैठने का नियम भी उन्होंने शिवाजी को अच्छी तरह समझा दिया। बड़ी साध के साथ शाहजी शिवाजी को दरबार में लेगये। पर दरबार में पहुँचकर शिवाजी ने दरबारी ढङ्ग का मुजरा नहीं किया। मामूली तरह से ही सलाम करके वे अपने पिता के निकट जाकर बैठ गये।

एक अपरिचित नवयुवक को पास ही बैठा हुआ देखकर सुलतान ने मुरार पन्त से पूछा—यह किसका लड़का है? क्या यही राजा शाहजी का पुत्र तो नहीं है?

मुरार ने सुलतान का सन्देह दूर करने के लिए कहा—हुज़ूर यह है तो शाहजी का ही पुत्र; पर आज पहली बार दरबार में आया है। दरबारी नियम अभी इसे अच्छी तरह से मालूम नहीं हैं। इसीलिए इसने बाक़ायदे आपको मुजरा नहीं किया है।

मुरार पन्त के समझाने से सुलतान को शिवाजी के इस व्यवहार की असलियत के सम्बन्ध में किसी तरह का सन्देह नहीं हुआ। सुलतान ने शिवाजी को अपने

पास बुलाकर बहुतेरे क़ीमती कपड़े तथा जवाहिरात दिये। शाहजी सुलतान की इस कृपा से बहुत प्रसन्न हुए, पर शिवाजी ने घर पर पहुँचते ही दरबारी पोशाक उतारकर स्नान किया, तब कहीं उनको सन्तोष हुआ।

शिवाजी का यह व्यवहार अच्छा नहीं था, इस विषय पर सब लोग एकमत हो सकते हैं; पर इससे एक बात का पता तो चल ही जाता है। वह बात शिवाजी के निश्चय की दृढ़ता है। एकबार वे जो निश्चय कर लेते थे, फिर उससे टलना तो वे जानते ही न थे। आगे भी शिवाजी बराबर पिता के साथ दरबार जाते रहे; पर सुलतान के आगे उन्होंने कभी मुजरा नहीं किया। सदा वे मामूली ढंग से ही उसे सलाम करते रहे।

हाज़िरजवाबी

एक दिन फिर सुलतान के मन में शिवाजी के इस व्यवहार पर कुछ सन्देह पैदा हो गया, पर इस वार उन्होंने और किसी से न पूछकर शिवाजी से इसका कारण पूछा। शिवाजी ने तुरन्त उत्तर दिया—पिताजी ने दरबार के सभी क़ायदे मुझे अच्छी तरह से समझा दिये हैं; पर आपके सामने आने पर मैं दरबारी ढंग का मुजरा करना भूल जाता हूँ। इसके लिये मैं आपसे माफ़ी

चाहता हूँ। मेरी यह भी आपसे प्रार्थना है कि आप मेरे सलाम को ही मुजरा के बराबर मान लें। बात यह है कि मैं बादशाह और पिता में किसी तरह का अन्तर नहीं समझता। मेरे लिए आप पिता के ही समान हैं। यदि मैं आप और पिता में कुछ भेद समझूँ तो मेरे लिए मुजरा करना ज़रूर लाज़िमी है।

सुलतान शिवाजी के इस उत्तर से बड़े प्रसन्न हुए। फिर शिवाजी के सम्बन्ध में उनके हृदय में किसी प्रकार का सन्देह नहीं रहा। शिवाजी के इस उत्तर से उनकी राजनीति के ज्ञान तथा हाज़िरजवाबी की योग्यता का अच्छा पता चलता है।

शिवाजी अपने पिता के साथ जिस रास्ते से दरबार को जाया करते थे, उसमें कसाइयों की कई दूकानें पड़ती थीं। उन दूकानों पर गौ का मांस बिका करता था। कभी कभी काटे हुए जानवरों के सिर लटके हुए मिलते थे। ख़ास राज-दरबार के पास ही कई यवन मांस बेचते हुए बैठे मिलते थे। उन कसाइयों तथा मांस बेचनेवालों को मांस बेचते देखकर शिवाजी के भीतर की आग कभी-कभी धधक उठती थी। पिता के साथ होने के कारण वे कभी कुछ कहते न थे? परन्तु धीरे-धीरे उनकी पीड़ा बढ़ती ही जाती थी।

गौ की रक्षा

एक दिन की बात है, शिवाजी अकेले राजमहल की ओर जा रहे थे। रास्ते में एक कसाई गौ को मारते हुए देख पड़ा। फिर क्या था, शिवाजी उस पर सिंह के समान टूट पड़े। लातों और घूँसों से उन्होंने उसको इतना मारा कि उसका कचूमर निकल गया। कसाई भाग खड़ा हुआ। इस तरह उस गौ की जान बच गई। बात की बात में बीजापुर भर में यह समाचार फैल गया। हिन्दुओं ने खुशी मनाई, मुसलमानों में तहलका मच गया। सुलतान के पास भी इसकी खबर पहुँची। पर दरबार में शाहजी का इतना प्रभाव था कि कानाफूसी होकर ही रह गई। बिना किसी तरह की जांच-पड़ताल के यह बात दब गई।

शिवाजी ने उस दिन कसाई की मरम्मत तो कर दी; पर इससे उनको सन्तोष नहीं हुआ। सन्तोष तो उनको तब होता, जब बीजापुर में गो-वध बन्द हो गया होता। पर यवनों का राज्य ठहरा, गो-वध कैसे बन्द होता। जब किसी तरह कोई और उपाय ही न देख पड़ा, तो उन्होंने निश्चय कर लिया कि मैं दरबार ही में न जाऊँगा। न यवनों को गो-वध करते हुए देखूंगा, न मुझे क्रोध आयेगा। पर

दरबार में जाने के लिए उनके पिता की आज्ञा थी। एक ओर पिता की आज्ञा थी, दूसरी ओर धर्म की हानि। अन्त में उन्होंने यही निश्चय किया कि पिताजी की आज्ञा का टल जाना उतना बुरा नहीं है, जितना धर्म की हानि करना। इसलिए उन्होंने शाहजी से कहा—पिता जी, अब तो दरबार में न जा सकूंगा। रास्ते में गो-मांस की दूकानें मिलती हैं। वहाँ का दृश्य देखकर मेरी आत्मा को बड़ा आघात पहुँचता है। जब तक गोवध बन्द न हो जायगा, तब तक मैं बीजापुर के दरबार से अपना किसी तरह का सम्बन्ध न रक्खूँगा। आप राजा के नौकर हैं। आप भले ही हिन्दू-धर्म की यह हानि सहन कर लें; पर मुझसे तो यह सहन हो नहीं सकती।

गो-वध बन्द कराना

शाहजी अपने हठी पुत्र की यह बात सुनकर बड़े सोच-विचार में पड़ गये। वे सोचने लगे कि अगर शिवा के न जाने पर सुलतान यह पूछ बैठे कि आज शिवा को अपने साथ क्यों नहीं लाये; तो मैं क्या जवाब दूँगा! मीरजुमला नामक एक दरबारी उनके मित्र थे। उन्होंने शिवाजी की हठ का उनसे ज़िक्र किया। दोनों ने मिलकर तै किया कि आज शिवाजी को दरबार न ले चलो। जब

सुलतान प्रसन्न देख पड़ेंगे, तब अच्छा अवसर देखकर मैं उनसे अपने राज्य में गोवध बन्द कर देने पर ज़ोर दूँगा। यद्यपि मीरजुमला जाति के मुसलमान थे; पर अपने मित्र की मुसीबत में साथ देने और हिन्दू-धर्म पर आघात होते देखकर इस जिम्मेदारी के काम को उन्होंने अपने ऊपर लिया।

दोनों दरबार में गये। मौक़ा देखकर मीरजुमला ने सुलतान से कहा—हुज़ूर के राज्य में हिन्दू और मुसलमान बराबरी का दरजा रखते हैं। हुज़ूर दोनों ही जातियों के पिता के समान हैं। पर गौओं का जो वध किया जाता है, उससे हिन्दुओं के दिलों पर चोट पहुँचती है; पर हुज़ूर के राज्य की शोभा तो इस बात में है कि दोनों जातियाँ अपने-अपने धर्म का पालन करने में आज़ाद रहें। हिन्दुओं के यहाँ गौओं की हत्या करना दूर रहा, हत्या करने वाले को देखना तक गुनाह माना जाना है।

मीरजुमला का यह कहना बड़ा काम कर गया। सुलतान ने उनकी बातों पर विचार करके आज्ञा निकाल दी कि शहर में न तो कोई गो-वध कर सकेगा और न गो-मांस ही बेच सकेगा। इस हुक्म को जो नहीं मानेगा, उसे माक़ूल सज़ा दी जायगी। यह काम हिन्दुओं के मज़हब के ख़िलाफ़ पड़ता है। इसीलिये अगर किसी हिन्दू

के सामने किसी ने गो-वध किया और ग़ुस्से में आकर हिन्दुओं ने उसे मार डाला तो फिर उसकी फ़रियाद पर ख़्याल नहीं किया जायगा।

सुलतान के इस हुक्म से बीजापुर नगर में हलचल मच गई। कसाई लोगों को शहर के एक ओर हटकर रहने का हुक्म दे दिया गया। अब शिवाजी फिर दरबार में आने लगे। शिवाजी की अपने धर्म पर ऐसी भक्ति देखकर सुलतान उन पर बहुत ख़ुश हुए। उन्होंने उनको समय-समय पर क़ीमती कपड़े, गहने तथा मेवा आदि देकर उन पर अपने स्नेह तथा आदर का भाव दिखलाया।

गो-घातक की हत्या

एक दिन एक घटना और हो गई। उस दिन शिवाजी अपने दोस्तों के साथ घोड़े पर सवार होकर शिकार के लिये जा रहे थे। सदर दरवाजे के पास एक कसाई बैठा हुआ गो-मांस बेच रहा था। शिवाजी भी उधर ही से आ निकले। तुरन्त उनकी नज़र उस कसाई पर जा पड़ी। तलवार बग़ल में लटक रही थी। फिर क्या था, उनको ताव आ गया। तलवार खींचकर उन्होंने कसाई की गर्दन पर ऐसा ज़ोर का वार कर दिया कि उसका सिर अलग होगया।

बात की बात में यह ख़बर शहर भर में फैल गई। चारों ओर यही चर्चा होने लगी। उधर क़साई की स्त्री रोती हुई बादशाह के पास फ़रियाद लेकर पहुँची; पर बादशाह ने जवाब दिया कि जब शहर में गो-मांस बेचने का हुक्म नहीं है, तब तुम्हारे शौहर ने यह बेजा हरकत क्यों की। शिवाजी ने जो कुछ किया, वही मुनासिब था। यह कहकर बादशाह ने उसे चार रुपये नक़द देकर और रोज़ाना भठियारख़ाने से सेर भर रोटी दिलाने का वादा करके उसे विदा किया।

ऊपर लिखी घटना और बादशाह का जवाब सुनकर बीजापुर के मुसलमान बिगड़ खड़े हुए। वे कहने लगे कि अब इस राज्य से इन्साफ़ उठ गया। जब मुसलमान बादशाहत में भी इसलाम का ख़्याल न करके हिन्दुओं की मज़हबी बातों को तरजीह दी जाने लगी, जब दिनदहाड़े और सरे बाज़ार क़साई मार डाले जाने लगे, जब सुल-तान को मुजरा न करनेवाला नौजवान दरबार में इज़्ज़त की नज़र से देखा जाने लगा, तो अब हम लोगों का इस शहर में इज़्ज़त से रहना नामुमकिन है।

पिता की चिन्ता

शाहजी को मुसलमानों की इन बातों की ख़बर मिली। वे सोचने लगे कि जान पड़ता है, शिवा मुझे तबाह

करके छोड़ेगा। सुलतान मेरी इज़्ज़त करते हैं। उन्हीं की मेहरबानी से मैं एक अच्छे पद पर क़ायम हूँ। उन्हीं की कृपाओं से मैं राजा बना बैठा हूँ; पर आख़िर सुलतान कब तक मेरा ख्याल करेंगे। दोस्त-दुश्मन सब के होते हैं। अगर शिवा में ऐसा ही उजड्डपन बना रहा, जैसा कि मैं उसमें कई वर्षों से पा रहा हूँ तो एक दिन कोई न कोई सुलतान से मेरी शिकायत कर देगा। नौकरी से जाऊँगा, जागीर जब्त होगी। मैं मारा-मारा फिरूँगा। अब एक दिन यही होना बाक़ी है।

माता-पिता का समझाना

इस प्रकार की अनेक बातें वे बड़ी देर तक सोचते रहे। अन्त में उन्होंने जीजाबाई के सामने ही शिवाजी को बुलाकर उन्हें समझाया कि तुम में धर्म के लिए जो भक्ति है, उसके लिए मैं तुम्हारी प्रशंसा करता हूँ; परन्तु तुम कभी-कभी बिना सोचे-बिचारे ऐसे काम कर डालते हो, जिनको सुनकर मुझे तुम्हारी बुद्धि पर तरस आती है। राह चलते हुए किसी आदमी को मार डालना कोई अच्छी बात है! तुम समझदार लड़के हो। तुमको ऐसा न करना चाहिए। तुम्हारी इस हरकत से मुसलमान बिगड़ उठे हैं। मुमकिन है, बादशाह तक वे फ़रियाद पहुँ-

चायें और तुम्हारी शिकायत करें। सोच देखो, इसका क्या नतीजा होगा। मैं देखता हूँ कि सुलतान के लिए तुम्हारे हृदय में घृणा के भाव हैं। परन्तु वे तुमसे कितना स्नेह रखते हैं! अगर तुम्हारी ही तरह मैं भी बन जाऊँ तो कहाँ का होकर रहूँ, मेरे लिए कहाँ ठिकाना है? इन सब बातों को ज़रा सोचो; विचार करो। अब तुम बच्चे नहीं रहे। मैं आशा करता हूँ कि आगे फिर कभी तुम ऐसा कोई काम न करोगे, जिसके लिए मुझे अपने जीवन में वैसे ही ख़तरे का सामना करना पड़े, जैसा अपनी नादानी से तुमने आज पैदा कर दिया है।

शिवाजी इन बातों को ध्यान से सुनते रहे। उन्होंने इसके उत्तर में कुछ नहीं कहा। शाहजी ने जीजाबाई पर भी शिवाजी को समझाने के लिए दबाव डाला। तब जीजाबाई ने भी शिवाजी को समझाते हुए कहा—बेटा, पिता की आज्ञा माननी चाहिए; पर मैं देखती हूँ कि उनकी आज्ञाओं पर चलना दूर रहा, तू तो उनके विरुद्ध चलता है। मैंने भी तुझे कई बार समझाया; पर तू मेरा भी कहना नहीं मानता है। माता-पिता की आज्ञाओं पर जो नहीं चलता, जो उनकी इच्छाओं और आशाओं को कुचलता है, वह अपने जीवन में कभी सफल नहीं होता। तुम्हें न अपने वंश की इज़्ज़त का ख़याल है, न अपने पिता

की आशाओं का ध्यान है। सोचो तो सही, तुम अपनी हरकतों से उनकी आशाओं पर पानी फेर रहे हो! बुद्धिमान होकर तुम यह क्या करते हो! आगे से तुमको कोई ऐसा काम न करना चाहिए, जिससे उनके हृदय को दुख पहुँचे।

शिवाजी का उत्तर

माता जीजाबाई की ऊपर लिखी बातों को शिवाजी बड़ी ही शान्ति के साथ सुन रहे थे। उनके कहने का असर भी शिवाजी पर काफी पड़ रहा था। मारे दुख के उनका गला भर आया आँखों की पुतलियाँ भींग गईं। वे बोले—माँ, तुम समझती होगी कि पिताजी और आप से मुझे जो आज्ञायें और उपदेश मिलते हैं, मैं उनका निरादर करता हूँ। तुम समझती होगी कि मैं एकदम से नासमझ हूँ कि इन सब बातों को समझता नहीं हूँ, पर ऐसी बात नहीं है। मुझे ऐसा जान पड़ता है कि ईश्वर ने मुझे इसलिये पैदा ही नहीं किया कि मैं आप लोगों की इच्छाओं और आशाओं का सदा ध्यान रक्खूँ मेरी निज की जो इच्छायें हैं, उनको बराबर दबाता जाऊँ! अगर मैं ऐसा करता हूँ तो गुरुजनों की शिक्षा, धर्म ग्रन्थों का ज्ञान सब मिथ्या है। क्या बचपन में तुमने मुझे नहीं बताया था कि संसार की सारी बातों से धर्म बड़ा है?

महापुरुषों की जीवनियों में धर्म पर प्राण न्यौछावर करने की जो बातें पाई जाती हैं, क्या वे सब उन पोथियों में ही बन्द रहने की चीज़ें हैं, क्या धर्म-पालन के उपदेश केवल कहने के लिए बनाये गये हैं? जब मैं हिन्दू-धर्म की हानि होती हुई देखता हूँ, तब मेरा ख़ून खौल उठता है। मैं अपने आप में नहीं रहता हूँ। मैं क्या करूँ, मुझे ईश्वर ने बनाया ही ऐसा है। मुझे यही जान पड़ता है, सदा मेरे मन में यही बात आती रहती है, जैसे ईश्वर ही मुझसे विधर्मियों को दंड देने को उकसाता है। सो मैं अपने प्यारे धर्म को तो न छोड़ सकूँगा। अगर मेरे कामों से आप लोगों को नुक़सान पहुँचाता है, तो आप मुझे अलग कर दें। मैं पूना चला जाऊँगा, वहीं रहूँगा। भगवान की जो इच्छा है, वही होकर रहेगी। आप लोग मेरी फ़िकर न करें, मुझे अपने जीवन के बहाव में ही बहने दें, फिर मैं चाहे जहाँ जा पहुँचूँ। किनारे लगूँ—या डूब ही मरूँ।

शिवाजी का उत्तर सुनकर जीजाबाई फिर कुछ कह न सकीं। उन्होंने शाहजी से कहा शिवा को मैंने बहुत समझाया; पर उसने मुझे जो उत्तर दिया है, जो बातें उसने मेरे सामने रक्खी हैं, उनका हम लोगों के पास कोई जवाब नहीं है। उसने साफ़-साफ़ कह दिया है कि माता-पिता की आज्ञाओं से भी जो ऊँची बात है, वह धर्मपालन

है। सो इस मामले में वह हमारा साथ छोड़ने तक के लिए तैयार है। जान पड़ता है, धर्म ही उसका प्राण है। और खुद मैं भी उसके इस हठ को बहुत अच्छा समझती हूं। इसलिए मेरी राय में उसे पूना भेज देना चाहिए।

इधर ये बातें हो रही थीं, उधर दादाजी कोणदेव जागीर का हिसाब-किताब लेकर आ पहुँचे। शाहजी ने उन्हें जीजाबाई और शिवाजी को अपने साथ पूना ले जाने की आज्ञा दे दी। दूसरे दिन दोनों पूना चले गये।

शाहजी ने शिवा को पूना भेज तो दिया; पर शिवाजी की तरफ़ से वे बेफ़िक्र नहीं हुए। उनका धर्म-पालन का हठ देखकर, उनकी बातों की याद करके, वे कभी-कभी मन ही मन प्रसन्न भी हो लेते थे।

स्वतन्त्र हिन्दू-राज्य क़ायम करना

शिवाजी बीजापुर में अपने पिता के साथ दो-तीन वर्ष रहे थे। उन दिनों सदा उनके मन में उथल-पुथल मची रहती थी। हिन्दुओं के गुलामी से भरे हुए विचार और व्यवहार देखकर वे बहुत दुखी होते थे। अपने धर्म का अपमान होते देखकर उनका हृदय जल उठता था। वे सोचते थे कि क्या अब फिर कभी हमारी इस प्यारी भारत-भूमि पर हिन्दुओं का राज्य क़ायम नहीं होगा?

साधु तुकाराम तथा समर्थगुरु रामदास के उपदेशों का उनपर बड़ा असर पड़ा था। बार-बार वे अपने आप को तौलते और सोचते कि क्या अपना यह जीवन लगाकर भी मैं हिन्दुओं को फिर से उठाने में कामयाब नहीं हो सकता? पूना चले जाने पर शान्ति के साथ उन्होंने इन सब बातों पर विचार किया। और अन्त में इसके लिये उन्होंने खुद ही आगे बढ़ने का निश्चय किया।

पूना के इर्द-गिर्द उन दिनों एक पहाड़ी जाति बसती थी। उसे लोग मावली कहते थे। इस जाति के पुरुष बड़े ही दिलेर और वीर थे।

शिवाजी इन लोगों के गावों में गये। उनमें एकता, वीरता और आज़ादी के विचारों का उन्होंने प्रचार किया। वे लोग बड़े ग़रीब थे। शिवाजी ने रुपयों-पैसों से भी उनकी सहायता की। इस तरह सभी मावले लोग शिवाजी के आज्ञाकारी हो गये। सहज ही शिवाजी ने मावलियों की एक अच्छी सेना बना ली। इस काम में उनके मित्र येसाजी कंक, तानाजी मालसुरे तथा बाजी फसलकर ने भी उनकी बड़ी सहायता की। शिवाजी के ये मित्र लोग भी मावली जाति के ही थे। बचपन से ही वे शिवाजी के साथ रहे। उनके साथ से मावली लोगों का संगठन करने में शिवाजी को पूरी सहायता मिली।

संवत् १७०० वि० की बात है। उस समय शिवाजी की उम्र सिर्फ़ सोलह वर्ष की थी। मावल में रोहिद नाम का एक क़िला था। उसी क़िले का मन्दिर था। उसका नाम रोहिदेश्वर था। वह बीजापुर के बादशाह के अधिकार में था। बीजापुर की ओर से ही उसमें एक पुजारी रहता था। शिवाजी ने उस पुजारी को अलग करके अपना पुजारी रक्खा। बीजापुर-दरबार के एक मुसाहिब दादाजी देशपांडे को शिवाजी का काम बहुत पसन्द आया। बीजापुर राज्य के मन्त्री ने जब दादाजी देशपांडे को यह हुक्म दिया कि वे शिवाजी से किसी तरह का सम्बन्ध न रक्खें। दादाजी ने शिवाजी को पत्र लिखकर उस चिट्ठी का सारा हाल बता दिया। शिवाजी ने उसके जवाब में लिखवा दिया कि "बीजापुर दरबार से हमारा कोई बैर नहीं है। पर रोहिदेश्वर मन्दिर की जो देवी शिवा है, उसने मुझसे एक स्वतन्त्र हिन्दू राज्य क़ायम करने की इच्छा ज़ाहिर की है।" हिन्दू-राज्य क़ायम करने का श्रीगणेश शिवाजी के इसी उत्तर से होता है।

क़िलों पर अधिकार जमाना

मावली लोगों में शिवाजी की इस दिलेरी और हिम्मत से हुए काम का भी बड़ा अच्छा असर पड़ा। दिन

पर दिन शिवाजी के आज्ञाकारी सैनिकों की तादाद बढ़ने लगी। तीन वर्ष के भीतर ही उन्होंने 'तोरण' नामक क़िले पर क़ब्ज़ा कर लिया। यह क़िला शाहजी की जागीर की दक्षिणी हद में था।

इस काम में शिवाजी को किसी तरह की भी ख़ून-ख़राबी का सहारा नहीं लेना पड़ा। उनके साथी येसाजी कंक, तानाजी मालसुरे और बाजी फसलकर ने क़िलेदार से मिलकर ऐसे रोब-दाब से बातचीत की कि उसने तुरन्त उनकी बात मान ली।

उन दिनों तोरण बहुत ही बेमरम्मत हालत में था। शिवाजी ने तुरन्त उसकी मरम्मत शुरू कर दी। मरम्मत कराने में उन्हें बहुत-सा धन मिला। उस धन से शिवाजी ने लड़ाई की बहुत-सी चीज़ें ख़रीदीं और उस क़िले की रक्षा का भी प्रबन्ध कर दिया। कुछ दिनों में जब बीजापुर दरबार में तोरण के क़िलेदार ने शिवाजी की शिकायत की, तो शिवाजी ने कहला भेजा कि क़िले का प्रबन्ध ठीक न देखकर मैंने इस क़िले को अपने चार्ज में ले लिया है। अच्छा प्रबन्ध होने से कर भी ख़ूब वसूल होगा। इस तरह बीजापुर राज्य की आमदनी बढ़ जायगी। इस उत्तर पर फिर जल्दी कोई कार्यवाही नहीं हुई और इस कारण शिवाजी को उन्नति करने का अच्छा मौका मिला।

तोरण क़िले से छः मील दूर मुरवाद नाम का एक स्थान था। शिवाजी ने वहाँ पर एक नया क़िला बनाया और उसका नाम राजगढ़ रक्खा। तोरण को अपने अधिकार में ले लेने और एक नया क़िला बनवाने के कारण पूना के इर्द-गिर्द के नौजवानों का ध्यान शिवाजी की ओर खिँच गया। सब लोग शिवाजी के भक्त हो गये और उनके कार्य में तन, मन, धन से सहायता देने को तैयार रहने लगे। उन नौजवानों में मोरो पिङ्गले, अन्नाजी दत्तो, निराजी पण्डित, रामजी सोमनाथ, दाताजी गोपीनाथ, रघुनाथ पन्त और गंगाजी मंगाजी मुख्य थे।

दादाजी कोणदेव शाहजी की जागीर का प्रबन्ध करते थे। शिवाजी के ये काम उनको पसन्द न थे। पर शिवाजी बराबर अपने काम में लगे रहे। उन्होंने दादाजी कोणदेव के कहने-सुनने की कोई परवाह नहीं की। अन्त में दादाजी कोणदेव ने शाहजी से शिवाजी की शिकायत की। उधर बीजापुर-दरबार ने शाहजी से शिवाजी के कार्यों के सम्बन्ध में जवाब माँगा। शाहजी उस समय कर्नाटक के युद्ध में थे। उन्होंने दरबार को लिख दिया कि "इस सम्बन्ध में मुझे कुछ मालूम नहीं है। पर मुझे तो ऐसा जान पड़ता है कि शिवाजी किसी बुरे मतलब से ऐसा नहीं कर रहा है। वह जो कुछ करेगा, दरबार को उससे लाभ ही होगा।"

उधर दादाजी कोणदेव को भी उन्होंने लिख दिया कि "वे शिवाजी को समझा-बुझाकर इस तरह के कामों से रोकें।" शिवाजी को भी उन्होंने एक पत्र में लिखा, कि तुमको राजगढ़ छोड़ देना चाहिये। पर शिवाजी ने इन सब बातों की ओर बिल्कुल ध्यान नहीं दिया।

कुछ दिनों के बाद दादाजी कोणदेव की मृत्यु हो गयी। बीमारी के समय शिवाजी ने उनकी बड़ी सेवा की। दादाजी उनकी सेवा देखकर बहुत प्रसन्न हुये। मरते समय उन्होंने शिवाजी से कहा—"मैंने समय-समय पर तुमको जो कुछ कहा है, वह अपनी समझ से तुम्हारे भले के लिये ही कहा है। तुम उसका कुछ ख्याल न करना।"

इसके बाद सब नौकरों को शिवाजी की आज्ञाओं पर चलने का हुक्म देकर अपने कुटुम्ब की रक्षा का भार भी शिवाजी को ही सौंपा। अन्त समय में उन्होंने शिवाजी के राजनीतिक ढङ्ग से चलने और हिन्दू-राज्य क़ायम करने के काम की भी प्रशंसा की। दादाजी कोणदेव की मृत्यु के बाद शाहजी ने शिवाजी को ही अपनी जागीर के प्रबन्ध का भार सौंप दिया। अब शिवाजी अपनी जागीर के स्वामी होगये।

शिवाजी के हाथ में जागीर का प्रबन्ध आते ही उनको उन सरदारों का मुक़ाबला करना पड़ा, जो दादाजी कोण-

देव के समय में उनके अधीन थे। उन सरदारों में शिवाजी की दूसरी माँ का भाई (मामा) ही प्रधान था। उसका नाम सम्भाजी मोहिते था।

एक दिन शिवाजी ने तीन सौ सिपाही साथ लेकर, रात के वक्त उसके 'सूपा' के क़िले पर धावा बोल कर उसे क़ैद कर लिया। 'सूपा' का क़िला हाथ आते ही चारों ओर शिवाजी का रोब छा गया। चाकण का क़िलेदार फिरंगोजी नरशाला भी शिवाजी से जा मिला। इसके बाद इन्दरपुर, बारामती, कोडावत तथा पुरन्दर के क़िले भी शिवाजी के अधीन होगये। कोडावत का क़िला ही कुछ दिनों बाद सिंहगढ़ के नाम से प्रसिद्ध हुआ। इन क़िलों पर क़ब्जा करने में शिवाजी को बहुत कुछ ख़र्च करना पड़ा। जो क़िले बेमरम्मत दशा में पड़े हुये थे, शिवाजी ने उनकी मरम्मत नये सिरे से कराकर उन्हें चमका दिया। इस तरह उनका सारा खजाना खाली होगया।

उन्हीं दिनों 'थाना' की रियासत से बीजापुर के बादशाह आदिलशाह का खजाना जा रहा था। शिवाजी ने मौक़ा देख कर अपने तीन सौ सैनिकों को साथ लेकर खजाना ले जाने वालों पर हमला करके सारा खजाना लूट लिया। इस लूट की खबर जब तक बीजापुर-दरबार में पहुँची, तब तक शिवाजी बीजापुर राज्य के नौ क़िलों पर अपना क़ब्जा जमा चुके थे।

नेकचलनी का एक नमूना

शिवाजी के साथियों ने भी उन दिनों हिन्दू-राज्य क़ायम करने में उनका बहुत साथ दिया। जिन दिनों महाराज शिवाजी ऊपर लिखे क़िलों पर धावा बोलकर उन पर अपना क़ब्जा जमा रहे थे, उन्हीं दिनों आनाजी सोनदेव ने कल्याण के क़िलेदार 'मौलाना अहमद' को कैद करके कल्याण क़िले को उससे छीन लिया।

इस लड़ाई में जो कुछ माल आनाजी के हाथ लगा, उसके साथ ही मौलाना अहमद की बहू (पुत्र की स्त्री) भी थी। जब शिवाजी के सामने मौलाना अहमद और उनकी बहू पेश की गई, तो शिवाजी ने मौलाना अहमद को तो आदर से साथ बीजापुर भेज दिया। उसके बाद मौलाना अहमद की बहू उनके सामने लायी गई। वह इतनी सुन्दर थी कि जब सभा के सरदारों ने उसे देखा, तो उनकी आँखें चकाचौंध हो उठीं। ऐसी स्त्री उन्होंने अबतक देखी न थी। सरदार लोग आपस में तरह-तरह की बातें करने लगे। खुद आनाजी सोनदेव ने चाहा कि महाराज उसे अपनी सेवा में रख लें। कुछ सरदार यह भी सोचते थे कि शायद महाराज दुश्मन की औरत के साथ दुश्मनी का ही बर्ताव करेंगे पर महाराज शिवाजी कितने बड़े

नेकचलन और उदार थे, यह कौन जानता था ! महाराज अगर एक मामूली आदमी की-सी बुद्धि रखते तो आज हिन्दुस्तान के इतिहास के पन्नों में उनका नाम अमिट अक्षरों में कैसे मिलता !

महाराज ने उस स्त्री को देखकर ख़ुश होकर कहा—"वाह ! कैसा सुन्दर रूप है ! अगर ऐसी ही सुन्दर मेरी माँ भी होती, तो मैं भी बड़ा सुन्दर होता !"

महाराज शिवाजी ने उसे उस दिन अपनी लड़की की तरह आदर के साथ रक्खा और दूसरे दिन कुछ गहने और क़ीमती कपड़े देकर विदा किया। साथ में कुछ सैनिक भी भेजे, वे उसे उसके घरतक पहुँचा आये।

सुना जाता है कि मौलाना अहमद की उस बहू ने चलते वक़्त कहा कि—"जो राजा ऐसा नेकचलन, अपने ईमान और मज़हब का ऐसा सच्चा है, जिसके दिल में औरत ज़ात की इज़्ज़त का ऐसा पक्का ख्याल है कि उसके आगे दुश्मनी के ख्याल को एकदम भुला सकता है, एक दिन वह ज़रूर बड़ा आदमी होगा, एक दिन उसकी बादशाहत का सितारा ज़रूर चमकेगा।"

अपने दुश्मन के तरफ़ की औरत के साथ ऐसा अच्छा बर्ताव करने के कारण चारों ओर शिवाजी का नाम चमक उठा। दुश्मन भी उनकी बड़ाई करने लगे।

गुणों का आदर

कोकण के दक्षिण में, समुद्र के किनारे, राजापुर नाम का एक शहर था। वह हबशियों के कब्ज़े में था। शिवाजी ने जब उसे अपने अधीन कर लिया, तब उस नगर में बालाजी आनाजी नाम के एक पुरुष से उनकी भेंट हुई। महाराज शिवाजी ने उनको अपने यहाँ निजी मन्त्री के पद पर रख लिया। बालाजी आनाजी पत्रों का मसविदा बहुत अच्छा तैयार करते थे। सुनते हैं, एक बार एक चिट्ठी का मसविदा महाराज ने तैयार करने की उनको आज्ञा दी। काम अधिक होने के कारण बालाजी को उस चिट्ठी का मसविदा तैयार करने का ख्याल नहीं रहा। पर महाराज ने जब पूछा कि क्या उस चिट्ठी का मज़मून आपने बना लिया—तो बालाजी के मुँह से 'हाँ' निकल गया। महाराज शिवाजी ने कहा—अच्छा सुनाओ। बालाजी ने चिट्ठी का एक कागज हाथ में लेकर ज़बानी उसका मसविदा सुना दिया। महाराज ने उसे सुनकर बहुत पसन्द किया। पर किसी दूसरे नौकर ने महाराज से बालाजी की शिकायत कर दी और कहा कि उन्होंने तो उस चिट्ठी का मसविदा मुँहज़बानी सुना दिया था, तैयार थोड़े ही किया था। महाराज शिवाजी उसकी

इस बात को सुनकर बालाजी की इस योग्यता पर बहुत ही प्रसन्न हुए। उन्होंने शिकायत की बात पर बिलकुल ध्यान नहीं दिया।

पिता पर संकट और उसका छुटकारा

जब बीजापुर के सुल्तान ने सुना कि शाहजी का पुत्र शिवाजी ही हमारे राज्य के किलों पर धावा बोलकर बराबर उनपर क़ब्ज़ा करता जा रहा है, तो वह क्रोध और शंका से बेचैन हो उठा। शिवाजी का सामना करके उनसे लोहा लेना तो मुश्किल था, इसलिये उसने शाहजी को धोखा देकर उन्हें कैद कराके एक कोठरी में बन्द कर दिया। उसने शाहजी से कहा कि शिवाजी की करतूतों के आप ज़िम्मेदार हैं; क्योंकि आपका वह लड़का है। आपकी इसमें साजिश पाई जाती है। ज़रूर आप उससे मिले हुए हैं। नहीं तो कल के छोकरे की भला इतनी हिम्मत हो सकती थी। या तो तुम अपनी ग़लती और कुसूर मंजूर करो, नहीं तो तुमको इसी में बन्द रख कर इसका दरवाजा चुनवा दिया जायगा।

पर शाहजी ने साफ़-साफ़ कह दिया कि वह मेरी पहली स्त्री का पुत्र होने के कारण मुझसे अलग रहता है और मेरी बात नहीं मानता है। ऐसी हालत

में, जब कि उसपर मेरा कुछ वश नहीं है, उसके कामों की ज़िम्मेदारी मेरे ऊपर आही नहीं सकती। जो कुसूर मेरी ज़ात से नहीं हुआ, उसको मैं किसी तरह नहीं मान सकता। आप को इख़्तियार है, चाहे जो सज़ा दें।

कहते हैं, बादशाह आदिलशाह ने उस कोठरी के दरवाजे को करीब-करीब पूरा चुनवा दिया था। हवा जाने के लिए ज़रा-सी ही साँस बाक़ी रह गई थी। अन्त में बादशाह ने कुछ सोचकर उस दरवाज़े को वैसा ही छोड़ दिया। बहुत दिनों तक शाहजी उसी कोठरी में रक्खे गये।

महाराज शिवाजी ने जब यह समाचार पाया तो उनको बहुत दुःख हुआ। उसी समय उनकी वीर पत्नी सुईबाई ने एक उपाय बताया। उन्होंने कहा कि आप इस समय ज़रा चतुरता से काम लें। शाहंशाह शाहजहाँ से जा मिलें। शिवाजी को अपनी पत्नी की यह सलाह पसन्द आ गई। शाहजहाँ के पास तो वे नहीं गये; पर उन्होंने उनको एक पत्र लिख भेजा। उसमें उन्होंने यह लिखवा दिया कि अगर आप मेरे पिता को कैदखाने से छुड़वा देंगे तो आगे दक्षिणी रजवाड़े जीतने में मैं आपकी मदद करूँगा। शाहजहाँ तो यह चाहता ही था कि दक्षिणी रजवाड़े भी मुग़ल बादशाहत में आ मिलें। इसलिए उसने शिवाजी की

बात मान ली। फिर क्या था। सम्राट शाहजहाँ की आज्ञा पाते ही शाहजी कैदखाने से छोड़ दिये गये।

शिवाजी को मरवा डालने की कोशिश

बादशाह आदिलशाह शिवाजी के हमलों से तंग आ गया था। उसने शिवाजी को मरवा डालने के लिए बाजी श्यामराज को तैनात किया। पर शिवाजी के जासूस इतने होशियार और तेज थे कि उनको बाजी श्यामराज की नियत का पता चल गया। शिवाजी को पाना तो दूर, बाजी श्यामराज उनकी छाँह तक न पा सका। वह बीजापुर को वापस लौट गया।

बाजी श्यामराज को जावली क़िले के स्वामी चन्द्राव मोरे ने अपने क़िले में ठहरकर उसके काम में साफ़ तौर से मदद दी थी। महाराज ने उसके क़िले को भी जीत लिया।

महाराज शिवाजी ने जावली क़िले के पास एक और किला बनवाया और उसका नाम प्रतापगढ़ रक्खा। उसमें उन्होंने कुल-देवी 'भवानी' का एक मन्दिर भी बनवा दिया। जावली एक बहुत बड़ा और मज़बूत क़िला था। उसको जीत लेने पर उसके इर्द-गिर्द के और क़िलेदार भी उनसे आ मिले। एक रोहिड़ा बच गया था। महाराज ने एक दिन मौका देखकर रात को उस

पर भी एक बड़ी सेना के साथ धावा कर दिया और उसे भी जीत लिया। इस लड़ाई में बाजी प्रभु नामक एक सरदार की बहादुरी देखकर महाराज बहुत प्रसन्न हुए। महाराज ने उसको अपनी सेना में नायक के पद पर रखकर उसका आदर किया।

पाठक देखेंगे कि थोड़े ही दिनों के भीतर लगातार कितने क़िले महाराज शिवाजी के हाथ लगे। क़िलों के सिवा एक से एक बड़े और वीर सरदार तथा योग्य विद्वान पुरुष भी उनको मिल गये। अब उनको न धन की कमी थी, न जन की और न ज़मीन की। अब तक वे क़रीब चालिस क़िलों के राजा हो चुके थे। इसलिए अब उन्होंने बाक़ायदे एक हिन्दू राज़्य क़ायम कर दिया। मोरो त्र्म्बक पिंगले, प्रधान मंत्री (पेशवा), नीलोन्सोनदेव खज़ान्ची, गङ्गाजी मङ्गाजी संवाददाता, आबाजी 'सोनदेव' दफ़्तर, काग़ज़ात और चिट्ठियों की लिखा-पढ़ी के अफ़सर, नेताजी पालकर दस हज़ार घुड़सवारों के स्वामी और यसाजी कंक दस हज़ार पैदल सेना के सेनापति के पद पर रक्खे गये।

अफ़ज़ल खाँ का बध

बीजापुर का सुलतान रात-दिन शिवाजी को फाँसने की कोशिश में लगा था। एक दिन उसने अपने सब

सरदारों को इकट्ठा करके शिवाजी को कैद करने की सलाह की। अनेक सरदार तो ऐसे थे कि वे शिवाजी के नाम से घबड़ाते थे। वे शिवाजी की ताकत का लोहा मानते थे। इसलिए उनमें से कोई इस काम के लिए तैयार न हुआ। अन्त में एक मुसलमान सरदार ने, जिसका नाम अफ़ज़ल खाँ था, शिवाजी को कैद करने का बीड़ा उठाया।

अफ़ज़ल खाँ बीजापुर दरबार के अमीरों में मुख्य था। वह अपनी बहादुरी के कारण ही इस प्रकार उन्नति कर सका था। वह बड़ा ही चालाक था। जब वह शिवाजी का मुक़ाबला करने के लिये बीजापुर से रवाना हुआ तब उसका भी दिल दहल गया। वह सोचने लगा कि कहीं ऐसा न हो कि मैं खुद ही मारा जाऊँ। खुदा न करे, ऐसी नौबत आये। पर अगर ऐसा हो गया, तो मेरी इन बेगमों की क्या हालत होगी। अपने हृदय की इस उधेड़-बुन से छुटकारा पाने के लिए उसने अपनी एक सौ त्रियेसठ बेगमों को कत्ल करवा दिया? ज़रा सोचो तो सही, अफ़ज़ल खाँ कैसा बेरहम, कैसा जल्दबाज़ और कैसा सनकी था।

अफ़ज़ल खाँ शिवाजी के राज्य के मंदिरों को तोड़ता और मूर्त्तियों को फोड़ता हुआ 'वाई' नाम के नगर में

आकर ठहर गया। वहां उसने लोहे का एक पिंजड़ा भी शिवाजी को कैद करके ले जाने के लिए बनवाया। शिवाजी उन दिनों बाई के निकट ही रहते थे। उन्होंने जावली पहुँच कर अपनी सेना को युद्ध के लिये तैयार किया। अफ़ज़ल खाँ ने अपना दूत भेजकर शिवाजी को अपने यहाँ बुला भेजा। उधर जासूसों के द्वारा शिवाजी को अफ़ज़ल खाँ के कपट-जाल का पता चल गया था। उन्होंने उसके दूत को वापस करके अपने दूत से कहला भेजा कि खाँ साहब अगर मुझसे मिलना चाहते हैं तो यहाँ आकर मुझसे मिल जायँ। यहाँ उनकी मेहमानदारी करने का भी मुझे काफी मौका मिलेगा। पर यहाँ भी मैं उनसे एकान्त में ही मिलूँगा, उनके साथ और कोई न होगा।

अफ़ज़ल खाँ अपनी बहादुरी के घमंड में चूर था। उसने शिवाजी के यहाँ जाकर भी मिलना मंजूर कर लिया। प्रतापगढ़ क़िले के पास शामियाना लगवा दिया गया।

शिवाजी पूरी तैयारी के साथ खाँ साहब से मिले। ऊपर से वे सोनहरे काम का अँगरखा पहने हुए थे। पर भीतर से जिरह बख्तर डटे हुए थे। सिर की रक्षा के लिए लोहे का टोप था, उसी के ऊपर वे पगड़ी बाँधे हुए थे। उनके हाथ में बघनख था, जो मुट्ठी बाँधने पर अँगूठी-सा मालूम होता था; पर हाथ खोल देने पर लोहे के

बहुत पैने नाखून निकल आते थे। अँगरखे के नीचे एक कटार भी छिपी हुई थी। इस तरह ऊपर से शिवाजी बिल्कुल निहत्थे थे, पर भीतर से पूरी तरह तैयार थे। अफ़ज़ल खाँ के सिपाही चारों ओर लगे थे। वह ख़ुद भी तलवार लेकर आया था। शिवाजी को निहत्था देखकर उसका हौसला दूना हो गया। सामने आते ही उसने कहा—तुम तो एक मामूली किसान के लड़के हो, ऐसा बढ़िया शामियाना तुमने कहाँ से पाया ?

शिवाजी अफ़ज़ल खाँ की इस बात को सहन न कर सके। उन्होंने तुरन्त उत्तर दिया—यह काम मेरा है, न कि तुम्हारा। तुम तो भठियारे के लड़के हो। तुम इन बातों को क्या समझोगे !

शिवाजी का उत्तर सुनकर अफ़ज़ल खाँ शिवाजी पर टूट पड़ा। वह शरीर से बहुत तगड़ा था। उसने शिवाजी को एक हाथ से दबाकर दूसरे से तलवार का वार किया। पर जिरह बख्तर के कारण उसका वार ख़ाली गया। उसी क्षण शिवाजी ने बघनखा फैलाकर अफ़ज़ल खाँ के पेट में भोंक कर उसका काम तमाम कर दिया। अब दोनों ओर के सैनिक एक दूसरे पर टूट पड़े। शिवा-जी के सैनिक संख्या में कम थे; पर बहादुर अधिक थे।

खाँ साहब के सैनिक कुछ तो मारे गये, कुछ भाग खड़े हुए। जो बच गये, वे कैद कर लिए गये।

अफ़ज़ल खाँ शिवाजी के बड़े भाई शम्भाजी को मार चुका था। आज शिवाजी ने उसका बदला चुका लिया। उनकी माताजी अपने पुत्र की इस बहादुरी से बड़ी प्रसन्न हुईं। इन्होंने शिवाजी को छाती से लगाकर उनका प्यार किया और शिर पर हाथ फेर उन्हें आशीर्वाद दिया। इस जीत में शिवाजी को बहुत-सा माल मिला। जो रुपया मिला, उसे उन्होंने सेना में बाँट दिया। जो घायल हो गये थे, उन्हें पेंशिन दी। जो मर चुके थे, उनके कुटुम्बियों की रुपये-पैसे से मदद की।

इस जीत के कारण शिवाजी का नाम दक्षिण में ही नहीं, हिन्दुस्तान भर में फैल गया। बहुत दिनों तक राज्य में ख़ुशियाँ मनाई गईं। शिवाजी के वंश के लोगों के पास आज भी अफ़ज़ल खाँ की तलवार मौजूद है, उसके ख़ेमे का सुनहला गुम्बज आज भी श्री महाबलेश्वर के मन्दिर पर चमकता हुआ शिवाजी की वीरता की याद दिलाया करता है।

बीजापुर से मुठभेड़

अफ़ज़ल खाँ की मृत्यु का समाचार बात की बात में बीजापुर राज्य में फैल गया। बीजापुर राज्य भर में

इसका शोक मनाया गया। इधर शिवाजी बराबर क़िले पर किले जीतते रहे। थोड़े ही दिनों में उन्होंने परवनगढ़ वासन्तगढ़, रांगना, विशालगढ़, मन्हाला आदि किलों पर अपना क़ब्ज़ा जमा लिया। इसके बाद उन्होंने समुद्री किनारों पर भी धावा बोल दिया और दाभोल, चेउल तथा राजापुर नगरों पर चढ़ाइयाँ करके हबशी, पोर्तगीज़, तथा अँगरेज़ सौदागरों की कोठियाँ लूट लीं। चेउल में दो अँगरेज़ सौदागरों को कैद कर लिया।

बीजापुर का सुलतान अली आदिलशाह शिवाजी की चढ़ाइयों से तंग आ गया था।

उसने सावन्त वाड़ी के उन सामन्तों को भी शिवाजी के खिलाफ़ कर दिया जो असल में हिन्दू थे। इस तरह चारों ओर से शिवाजी पर हमले होने शुरू हो गये। पर शिवाजी घबड़ाना तो जानते ही न थे। उन्होंने अपने चुने हुए सरदारों को अलग-अलग सेनाएँ देकर अलग-अलग मोरचा लेने पर तैयार कर दिया। राघो बल्काल को फ़तेह खाँ की ओर भेजा, बाजी फसलकर को सामन्तों से लड़ने को भेजा और नेताजी पालकर के साथ वे ख़ुद बीजापुर की सेना से भिड़ने को पन्हाला के किले पर जा पहुँचे। सिद्दी जौहर ने पन्हाला क़िले को घेर लिया। नेताजी पालकर ने क़िले का मुख्य

फाटक बन्द कर दिया और मावला सेना को लेकर सिद्दी जौहर की सेना में मार-काट मचा दी। तब तक बरसात शुरू हो गई। शिवाजी समझते थे कि बरसात शुरू होने पर सिद्दी जौहर की सेना लौट जायगी; पर ऐसा न हुआ। उसकी सेना जमी रही। अब शिवाजी चिन्ता में पड़ गये। अगर पन्हाला का क़िला हाथ से चला जाता तो बड़ी बेइज़्ज़ती की बात होती। इसलिये उन्होंने एक चाल चली। शिवाजी ख़ुद सिद्दी के पास जा पहुँचे। उन्होंने क़िले को सिद्दी के हवाले कर देने की बात भी कह दी। फिर क्या था, मारे ख़ुशी के सिद्दी फूल गया। रात हुई। जब सिद्दी जौहर की सेना आनन्द के साथ सो रही थी, उसी समय मौक़ा देखकर शिवाजी क़िले से निकल गये; पर अफ़ज़ल के बेटे को पता चल गया। उसने घुड़सवार सेना के साथ उनका पीछा किया। यह हाल देख बाजीप्रभु ने उनसे कहा कि आप तो विशालगढ़ क़िले को चले जाइये, मैं तब तक किसी तरह बीजापुरी सेना से मोरचा लूँगा। शिवाजी विशालगढ़ की ओर बढ़ गये। बाजीप्रभु पनघट-पानी की घाटी में पहाड़ की तरह डट गये। बड़े ज़ोर की लड़ाई हुई, बाजीप्रभु मरते दम तक लड़ते रहे, जिस समय शिवाजी के विशालगढ़ पहुँच जाने पर तोपों की आवाज़ हुई, उसी समय बाजीप्रभु ने प्राण-

त्याग किये। अपने स्वामी की जान बचाने में आज बाजीप्रभु ने बड़े ही सुख के साथ जान दी। धन्य बाजीप्रभु !

उधर राघो-बल्लाल फ़तेह से लड़ रहे थे, इधर से शिवाजी ने भी जंजीरा पर चढ़ाई कर दी। रास्ते में उन्होंने उन अँगरेज़ों को भी क़ैद कर लिया, जिन्होंने पन्हाला क़िले के घेरने में सिद्दी जौहर को मदद की थी। इसके बाद उन्होंने राजापुर तथा शृङ्गारपुर पर भी अपना क़ब्ज़ा जमा लिया। फिर मधोल को जीता, खवास खाँ को खदेड़ा, सामन्तों की हिम्मत पस्त की, पुर्तगीज़ों को जीता और उसकी सुलह में बहुत-सी बन्दूकें लीं।

इस तरह शिवाजी ने बीजापुर-दरबार का सारा घमंड मिट्टी में मिला दिया। जब सुलतान अली आदिलशाह ने यह समझ लिया कि शिवाजी से पार पाना कठिन है तो उसने शिवाजी से सुलह करने के लिए उनके पिता शाहजी को भेजा। बीजापुर दरबार ने शिवाजी को सात लाख हुण (सालाना कर) देना मंजूर किया। साथ ही कल्याण से गोवा तक का हिस्सा भी शिवाजी को दे दिया।

पिता-पुत्र की भेंट

सुलह का सँदेसा लेकर जब शाहजी शिवाजी से मिलने आये, तो शिवाजी की आँखों में आनन्द के आँसू

छलक आये। शाहजी पालकी पर सवार होकर उनके ख़ीमे की ओर जा रहे थे। दर्शन होने पर वे उनके पैरों पर लिपट गये। वे न तो घोड़े पर सवार हुए, न पालकी पर बैठे। पालकी का एक पाया पकड़े हुए, पिता के जूतों को दूसरे हाथ में लिये हुए पैदल ही चले। उन्होंने हाथ जोड़कर अपने कुसूरों की माफ़ी चाही। शाहजी ने जवाब दिया—तुमने सीसोदिया वंश की बड़ाई को कायम ही नहीं रक्खा, बल्कि उसे चमका दिया। मुझे तुम्हारा पिता होने का अभिमान है। देर तक शिवाजी की प्रशंसा करने के बाद उन्होंने उनको आशीर्वाद दिया। उन्होंने यह भी बतलाया कि मैंने मन ही मन यह संकल्प किया था कि अगर मेरा पुत्र हिन्दू राज्य क़ायम करने में सफल हुआ तो मैं एक लाख रुपये की सोने की मूर्ति बनाकर तुलजा भवानी को चढ़ाऊँगा।

इच्छा पूरी होने पर इस समय शाहजी ने इसे करके दिखा दिया।

शाहजी राज्य की देख-भाल करके बीजापुर लौट गये। शिवाजी ने कहा—अब आप अपने इस राज्य को सम्हालिये, अब आपको बीजापुर में रहने की ज़रूरत ही क्या है; पर शाहजी न माने। वे बीजापुर लौट गये।

संवत् १७२० में शिकार खेलते हुये घोड़े से गिर जाने के कारण, शाहजी की मृत्यु हो गई। शिवाजी को इसका बहुत दुःख हुआ। उन्होंने लाखों रुपये शुद्धि में खर्च किये। जहाँ पर शाहजी की मृत्यु हुई थी, उस स्थान पर उन्होंने एक समाधि-मन्दिर बनवा दिया। आजकल उसके खँडहर पाये जाते हैं।

मुग़लों से युद्ध

बीजापुर को मिलाकर शिवाजी ने सोचा, अब मुग़लों से भी टक्कर लेना चाहिए। पिता को कैद से छुड़ाने में उन्हें एक बार शाहजहाँ से सहायता लेने की ज़रूरत पड़ी थी। पर उस समय बात और थी। अब औरङ्गज़ेब का जोर-जुल्म जोरों पर था। उसने अपने पिता को नज़रबन्द कर रक्खा था। इस समय तो अपने भाइयों के लड़-झगड़कर बादशाह होने के लिये वह छटपटा रहा था। इसलिए उसने शिवाजी को पत्र लिखकर बादशाहत हासिल करने के लिए मदद माँगी। पर शिवाजी औरङ्गज़ेब की नीति से बहुत नाराज थे। उन्होंने औरङ्गज़ेब के उस पत्र का कोई उत्तर न देकर उसको एक कुत्ते के गले की पट्टी में लटकाकर उसे शहर भर में घुमा दिया।

जब औरङ्गजेब बादशाह हो गया, तो उसने दक्षिण की सूबेदारी शाहजादा मुअज्ज़म के सुपुर्द की। पर वह शिवाजी की ताक़त को पहचानता था। शिवाजी के सामने वह कभी नहीं आया। पर संवत् १७१६ में जब शाइस्ता खाँ उसकी जगह पर दक्षिण का सूबेदार बनाया गया, तो उसने बादशाह औरङ्गजेब की इच्छा से शिवाजी से मुठभेड़ करना शुरू कर दिया। उसने कल्याण किला ले लिया, शिवाजी ने उसके प्रबलगढ़ क़िले पर कब्जा कर लिया। इस तरह युद्ध ठन गया। इधर औरङ्गजेब ने शाइस्ता खाँ को डाँट बताई कि बत्तिस करोड़ रुपये नक़द, एक लाख सेना, सात सौ हाथी, चार हजार ऊँट, तीन हजार बैलगाड़ियों और दो हजार घोड़ागाड़ियों से लदे हुये लड़ाई के सामान होने पर भी तुम्हारे किये कुछ नहीं हो रहा है? अब उसने शिवाजी को कैद करके मरहठे राज्य को तहस-नहस करने की प्रतिज्ञा की।

अब शाइस्ता खाँ ने पूना को ले लिया। वह राज-महल में जाकर रहने लगा। शाइस्ता खाँ होशियारी में कम न था, उसने दक्षिण की ओर जोधपुर के राजा यशवन्तसिंह को दस हजार सिपाहियों के साथ तैनात कर रक्खा था; क्योंकि इधर ही सिंहगढ़ का किला पड़ता था और उस ओर से ही हमला होने का डर था। चारों

आर बादशाही सेना का पहरा रहता था। बिना इजाज़त लिए कोई पूना के बाहर आ-जा न सकता था; पर शिवाजी ने ऐसे चालाक शाइस्ता खाँ को भी करारी मात दी। संवत् १७२० यानी सन् १६६३ ई० की ५वीं अप्रैल की रात थी। एक बारात के जुलूम के रूप में शिवाजी पूना शहर के भीतर सदल-बल चले आये। बारात लाने का हुक्म शिवाजी के एक जासूस ने मरहठे सरदार से मिलकर पहले से ही ले रक्खा था। ठाट के साथ बरात शहर के भीतर जा पहुँची। शिवाजी के कुछ पैदल सिपाही मुग़ल सिपाही बन गये और उन्होंने अपने कुछ साथियों को क़ैद करके हल्ला मचा दिया कि ये युद्ध के कैदी हैं, इन्होंने हम लोगों को मारा था। कुछ हथियारबन्द सिपाही इधर-उधर आस-पास जा छिपे। उन्हें बता दिया गया था कि बिगुल बजते ही वे लड़ने को तैयार मिलें। शहर में पहुँचकर शिवाजी अपने नामी सरदारों को साथ लेकर राज-महल के पीछे से उसके अन्दर जा पहुँचे। शिवाजी का बचपन इसी महल में बीता था। जौ-जौ भर स्थान उनका जाना समझा हुआ था। इसलिए वे छिपकर आसानी से भीतर चले गये। पहले उन्होंने शाइस्ता खाँ के लड़के का काम तमाम किया, जिसे वे शाइस्ता खाँ ही समझे थे। फिर वे उसकी बेगम के पास जा पहुँचे, उससे शाइस्ता

खाँ को पूछकर उसके पास जा पहुँचे। तलवार का एक पूरा वार करना ही चाहते थे कि बेगम उनके पैरों पर गिर पड़ी। शिवाजी दोनों को पकड़कर बाहर ले आये। उन्होंने बेगम की प्रार्थना पर खाँ को मारा तो नहीं, पर उनकी एक अंगुली काटकर उससे साफ़-साफ़ कह दिया कि तूने अगर कल इस महल को खाली न कर दिया, तो तेरी जान ले लूँगा। महल के बाहर उनके एक सरदार दादाजी बापूजी सौ सिपाहियों के साथ मौजूद थे। उन्होंने और शिवाजी के और साथियों ने पहरेदारों की अच्छी खबर ली। मारते हुए उसने कहा कि इसी तरह पहरेदारी की जाती है! बाजा बजाने वालों के घरों के अन्दर घुसकर शिवाजी के सैनिकों ने कहा—बाजा बजाओ, खाँ साहब का खास हुक्म है। जनानखानों से रोने,चीखने, पहरेदरों के मचे हुए शोर गुल और बाजेवालों के बाजों की आवाज़ से पैदा हुए कोलाहल से पूना नगर गूंज उठा। ऐसे समय में ही मौक़ा पाकर शिवाजी पूना से बाहर चले आये।

औरङ्गजेब से छेड़छाड़

मुग़लों से लड़ने के बाद अब शिवाजी को धन की फिर ज़रूरत पड़ी। मालूम नहीं कब उनसे फिर लड़ना

पड़, इसलिए वे पहले ही से तैयार रहना चाहते थे। उस समय सूरत व्यापार का खास अड्डा बना हुआ था। अँगरेज़, डच तथा योरप के अन्य देशों के व्यापारी उसी नगर से अपना व्यापार चलाते थे। इस तरह इस नगर में धनी मानी व्यापारी लोग काफी तादाद में रहते थे। शिवाजी ने इस नगर पर चढ़ाई करके साढ़े आठ करोड़ का माल लूट लिया। इसी सिलसिले में उन्होंने औरङ्गाबाद तथा अहमदनगर पर भी चढ़ाई करके लूट मार की। इसके बाद तीन ज़हाजों और पचासी नावों के साथ उन्होंने बारसिलोर पर भी चढ़ाई कर दी। यहाँ भी बहुत-सा धन उसके हाथ लगा।

शिवाजी क़ैद में

जयसिंह को मिलाकर शिवाजी ने बीजापुर राज्य से लड़ाई शुरू कर दी। इन युद्धों में शिवाजी ने बड़ी बहादुरी दिखलाई। जयसिंह ने सोचा कि अब इनके साथ इस तरह से पेश आना चाहिये कि ये सदा मुगलों का साथ निभाते रहें। इसलिये राजा जयसिंह ने औरंगज़ेब को एक पत्र लिखा। उसमें उन्होंने यह समझाया कि बीजापुर और गोलकुण्डा के सुलतान आपस में मिल गये हैं। इसलिये शिवाजी को मिलाये रखना जरूरी है। अच्छा हो आप शिवाजी से मिलकर उसका दिल जीत लें।

औरंगज़ेब शिवाजी से मिलने के लिये तैयार होगया। जयसिंह ने शिवाजी को पत्र लिखा। शिवाजी औरंगज़ेब से मिलने को तैयार होगये।

अपने पुत्र शम्भाजी तथा दस सरदारों के साथ शिवाजी बादशाह के पास जा पहुँचे। बादशाह ने कहा—आओ राजा शिवाजी। शिवाजी उसके निकट पावदान तक बढ़ गये। उनकी ओर से बहुत से जवाहिरात औरंगज़ेब की भेंट में दिये गये। शिवाजी औरंगज़ेब का भाव ताड़ गये थे। उन्होंने उनको सलाम नहीं की। शिवाजी से मामूली ढंग से कुशल-समाचार पूछकर बादशाह ने उन्हें उनकी जगह पर बैठने का इशारा किया। शिवाजी ने रामसिंह (राजा-जयसिंह के पुत्र) से पूछा—यह किस पद की जगह है ? रामसिंह ने बतलाया—पाँच हज़ारी मनसब की।

रामसिंह का उत्तर सुनकर शिवाजी क्रोध के मारे लाल हो गये। उन्होंने भरे दरबार में राजा जयसिंह के बातों की चर्चा की और बतलाया कि बादशाह ने अपने यहाँ बुलाकर मेरी बेइज्जती की है। उस समय उनके पास हाथियार न थे। उन्होंने लपककर रामसिंह की तलवार लेनी चाहिये; पर रामसिंह ने उन्हें तलवार नहीं दी। तब शिवाजी ने चाहा कि अपनी कटार निकालकर आत्म-हत्या कर लें; पर अपने साथी सरदारों के रोक देने से वे ऐसा न

कर सके। अन्त में अपमान, बेबसी और दुःख के कारण वे बेहोश होकर गिर पड़े। जब उनकी आँखें खुलीं तो उन्होंने अपने आपको ताजमहल के पास के एक मकान में नज़रक़ैद पाया। पाँच हज़ार सिपाहियों का पहरा उस मकान के चारों ओर बैठा हुआ था।

क़ैद से छुटकारा

क़ैद हो जाने पर शिवाजी घबड़ाये नहीं, बराबर छुटकारे का उपाय सोचते रहे। कुछ दिनों बाद शिवाजी ने वृहस्पतिवार को व्रत रखना शुरू कर दिया। व्रत के दिन शिवाजी बहुत दान-पुण्य करते, ब्राह्मणों को भोज देते। मिठाइयों से भरे हुये टोकरे मुग़ल-दरबारियों के यहाँ भी पहुँचते। फलों से भरी हुई डालियाँ इस क़दर बराबर आती जाती रहतीं कि रात दिन उनका सिलसिला जारी रहता। इसी समय उन्होंने अपने बहुतेरे साथियों को भेज दिया और यह ज़ाहिर किया कि मैं तो अब यहीं रहूँगा। केवल उनके पुत्र शम्भाजी तथा हीरा फ़रज़न्द, जो उनका सौतेला भाई था, रह गया। इस तरह औरंगज़ेब को विश्वास हो गया कि अब शिवाजी यहीं रहेंगे।

कुछ दिनों के बाद बड़े ज़ोरों के साथ यह ख़बर फैल गई कि शिवाजी बीमार हैं। रोज़ाना बड़े-बड़े वैद्य और

हकीम आने जाने लगे। फिर बराबर मिठाइयों तथा फलों से हुये टोकरे दान-पुण्य में आने जाने लगे। यह भी सुना गया कि शिवाजी इतने अधिक बीमार हो गये हैं कि किसी से मिलते तक नहीं हैं। पहरेदारों से भी शिवाजी ने कह दिया कि मैं बैठ नहीं सकता हूँ, कोई मेरे पास न आये, क्योंकि इस तरह मेरे आराम में खलल पड़ेगा। मुझे नींद कम आती है। जब कभी आती भी है तो लोगों के आने जाने की खटपट से नींद उचट जाती है! उसी रात को उन्होंने हीराजी फ़रज़न्द को अपने पलङ्ग पर सुला दिया। उसके दाहने हाथ में शिवाजी की अँगूठी भी पहना दी गई। उस हाथ को बाहर खुला रखकर उसके सारे बदन को ओढ़ाकर ढक दिया गया। शाम हुई, मथुरा ले जाने को पांच टोकरे मिठाइयों और फलों से भरकर तैयार किये गये। एक में शिवाजी बैठे, दूसरे में उनके पुत्र शम्भाजी। व्रत के दिन कभी-कभी इतने बड़े-बड़े टोकरे आते जाते थे कि उन्हें दो-दो आदमी ले जाते थे। इसलिए इन टोकरों के निकालने में पहरेदारों को किसी तरह का शक नहीं हुआ। हीराजी दूसरे दिन दोपहर तक उसी पलंग पर लेटा रहा। अन्त में उठकर वैद्य बुलाने के बहाने वह भी बाहर निकल गया। इस बीच में जब-जब पहरेदार अन्दर आये, तब-तब हीरा को शिवाजी के पलंग पर लेटे हुए उन्होंने

यही समझा कि वे शिवाजी हैं। पर अब सब के सब बाहर हो गए।

फलों तथा मिठाइयों से भरे टोकरे जब आगरा शहर से बाहर आ गये तो एक जगह ढोनेवालों की मज़दूरी चुका दी गई। वे लौट गये। शिवाजी और शम्भाजी उनसे बाहर निकल आये। वहाँ से वे छः मील दूर एक गाँव में गये। उनका विश्वासी नौकर उनके लिए घोड़ा लिए पहले से हाज़िर था! कुछ देर बाद दाढ़ी-मूँछ मुड़ाकर साधू सन्यासी बनकर शिवाजी, शम्भाजी—सब लोग मथुरा गये और प्रयाग, काशी, गया तथा पुरी होते हुए दक्षिण चले आये।

सिंहगढ़ की जीत

उन दिनों शिवाजी 'प्रतापगढ़' क़िले में रहते थे। सिंहगढ़ का किला इस किले से देख पड़ता था। एक दिन माता जीजाबाई ने शिवाजी को बुलाकर कहा—शिवा, हमारे राज्य की छाती पर यवनों का यह क़िला अब तक बना ही रहा। तुरन्त इस क़िले पर क़ब्ज़ा करो।

शिवाजी ने बतलाया कि इस क़िले को जीतना बड़ा मुश्किल है, पर जीजाबाई ने न माना। उन्होंने कहा—अब तक बड़े से बड़े काम तुमने अपनी इच्छा से किये हैं अब यह क़िला तुम्हें मेरी इच्छा से जीतना ही होगा।

अब शिवाजी माता की आज्ञा का पालन करने के लिए मजबूर हो गये। उस समय उनकी सेना में सब से अधिक उत्साही और बहादुर तानाजी थे। उन्होंने उनको बुला भेजा। दरबार में शिवाजी ने अपने मौजूदा सरदारों को सिंहगढ़ के क़िले को जीतने के लिए तैयार करने की कोशिश की। पर कोई इस कठिन काम के लिए तैयार न हुआ। तानाजी उस दिन न आ सके, वे अपने लड़के के ब्याह के काम में लगे हुए थे। दूसरे दिन जब वे शिवाजी के पास चलने लगे तो लोगों ने उन्हें मना किया। उन्होंने कहा—महाराज को ख़बर लग ही गई है कि उनके लड़के का ब्याह है। ऐसी दशा में तुम्हारा जाना ज़रूरी नहीं है। पर तानाजी न माने। उन्होंने कहा—मालूम नहीं, कितना ज़रूरी काम हो। परिवार सम्बन्धी काम तो रहते ही हैं। पर स्वामी की सच्ची सेवा का मौक़ा बार-बार नहीं आता।

तानाजी शिवाजी के पास पहुँचे। शिवाजी ने सिंहगढ़ किले को जीतने के लिए मां की हठ की बात उनसे कह दी। तानाजी ने माताजी से भी मिलकर बातचीत की। अन्त में वे इस काम के लिये तुरन्त तैयार हो गये।

फिर क्या था, चुने हुए वीर सैनिकों को लेकर तानाजी ने सिंहगढ़ के नीचे छावनी डाल दी। दोनों ओर से घमासान युद्ध हुआ। अन्त में तानाजी मारे गये।

सिंहगढ़ क़िला जीत लिया गया। जीत का डंका तोपों की आवाज़ के साथ बजने लगा।

दूसरे दिन जब शिवाजी सिंहगढ़ क़िले पर आये, तो तानाजी की लाश को देखकर वे बहुत दुखी हुए। आँसू गिराते हुए बोले—सिंहगढ़ तो आया, पर सिंह चल बसा।

अभिषेक और अन्त

इस समय तीन सौ से भी अधिक क़िलों पर शिवाजी का अधिकार हो चुका था। एक करोड़ रुपया सालाना कर वसूल होता था। एक बड़े राज्य के वे स्वामी थे; फिर भी बहुत से लोग उनको मामूली सरदार ही समझते थे। इसलिए बाक़ायदे राज-दरबार करके, धूम-धाम के साथ उनको महाराजा बनाया गया। इस अभिषेक में महीनों दावतें हुईं। दान-पुण्य, ब्राह्मणों के सत्कार और यज्ञ में लाखों रुपये खर्च हुए थे। अभिषेक के दस दिन बाद उनकी माता की मृत्यु हो गई। शिवाजी को इसका बहुत दुःख हुआ।

चैत्र शुक्ल नवमी संवत् १७३७ को शिवाजी का स्वर्गवास हो गया। हिन्दुस्तान के इतिहास में इनसे बढ़कर हिन्दू-धर्म का भक्त हिन्दू-राज्य कायम करने में अपना जीवन न्यौछावर करने वाला दूसरा नहीं हुआ।

—:◎:—

छात्रहितकारी पुस्तकमाला की पुस्तकें

१—सफलता की कुंजी—स्वामी रामतीर्थ के अमेरिका में दिये हुए प्रसिद्ध व्याख्यान का सुन्दर अनुवाद । मू० ।)

२—ईश्वरीय बोध—स्वामी विवेकानन्द के गुरु स्वामी रामकृष्ण परमहंस के उपदेश-रत्नों का संग्रह । मू० ।||)

३—मनुष्य-जीवन की उपयोगिता—तिब्बत में प्राप्त एक बहुत प्राचीन पुस्तक का सरस अनुवाद । इसके एक-एक शब्द उपदेशप्रद हैं । मू० ||=)

४—भारत के दशरत्न—भारत के दस महान् पुरुषों का संक्षिप्त परिचय । मू० ।-)

५—ब्रह्मचर्य ही जीवन है—अपने विषय की भारत भर में एक ही पुस्तक है । इसने लाखों युवकों को पतन के गड्ढे से निकाल कर उनका उद्धार किया है ! मू० ।||)

६—वीर राजपूत—वीर-रस-पूर्ण एक सुन्दर ऐतिहासिक उपन्यास । तिरंगे चित्र से सुशोभित पुस्तक का मू० १)

७—हम सौ वर्ष कैसे जीवें—स्वस्थ, सुख-प्रद जीवन बिताने के लिये सुगम उपाय बतानेवाली पुस्तक । मू० १)

८—वैज्ञानिक कहानियाँ—ले० महात्मा टाल्स्टाय । मनोरंजक ढंग पर विज्ञान की शिक्षा देने वाली पुस्तक मू० ।)

९—वीरों की सच्ची कहानियाँ—भारत के वीरों की साहस और वीरता से भरी हुई फड़कती हुई कहानियों का अनुपम संग्रह । मू० ||=)

१०—आहुतियाँ—वीरों के बलिदान की अनुपम कहानियाँ जिनके एक-एक शब्द में जादू का सा असर है । मू० ।||)

११—पढ़ो और हँसो—गुदगुदी पैदा करनेवाली सात्विक और सुन्दर पुस्तक मू० ।|)

१२—जगमगाते हीरे—नवीन भारत के निर्माण-कर्त्ताओं का संक्षिप्त परिचय दिया गया है । मू० १)

१३—मनुष्य-शरीर की श्रेष्ठता—इसमें शरीर के भिन्न-भिन्न अंगों का महत्व और उपयोगिता बताई गई है। मू० ।=)

१४—फल, उनके गुण तथा उपयोग—फलाहार पर सुन्दर और उपयोगी पुस्तक। मू० १)

१५—स्वास्थ्य और व्यायाम—इसमें बल बढ़ानेवाले उपयोगी व्यायामों का विवेचन किया गया है। इस विषय पर हिन्दी में यह पहिली ही पुस्तक है। कई चित्रों से युक्त पुस्तक का मू० १।।)

१६—धर्म-पथ—महात्मा गाँधी के धार्मिक विचारों का संकलन किया गया है। २०० पृष्ठवाली पुस्तक का मू० ।।=)

१७—स्वास्थ्य और जल चिकित्सा—इस पुस्तक में सब रोगों पर प्राकृतिक चिकित्सा-विधि बतलाई गई है, जिनसे गरीब से गरीब आदमी भी बिना रुपये पैसे खर्च किये रोगों से मुक्त होकर स्वस्थ बन सकता है। मू० १।।)

१८—स्त्री और सौन्दर्य—इस पुस्तक में सौन्दर्य, और स्वास्थ्य रक्षा के लिये ऐसे सुगम साधन और सरल व्यायाम बतलाये गए हैं जिनके नियमित रूप से बर्तने से स्त्रियाँ सदा स्वस्थ और सुन्दरी बनी रह सकती हैं। कई चित्रों से सुशोभित पुस्तक का मू० २।।)

१९—बौद्ध-कहानियाँ—महात्मा बुद्ध के जीवन से सम्बन्ध रखने वाली शिक्षाप्रद मनोरंजक कहानियों का संग्रह है। मू० १)

२०—भाग्य-निर्माण—नवयुवकों में उत्साह, स्फूर्ति तथा नवजीवन संचार करने वाली अनुपम पुस्तक। इसके लेखक ठा० कल्याणसिंह जी शेखावत हैं। मू० १।।।)

२१—महिलाओं की पोथी—यह स्त्रियोपयोगी अनुपम पुस्तक है। इसमें स्त्रियों के काम की सभी बातें बड़े सुन्दर ढंग से लिखी गयी हैं। सजिल्द पुस्तक का मू० १।।)